© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 02 | January – March 2018

काम का अधिकार एवम सामाजिक आर्थिक न्याय: एक विवेचना

शिव प्रताप यादव , शोधछात्र , राजनीति एवं लोकप्रशासन विभाग
डॉ शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ (उ०प्र०)

सार : अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत एक राज्य को "एक स्वतंत्र राजनीतिक इकाईए परिभाषित क्षेत्र पर कब्जा करने के रूप में परिभाषित किया गया हैए जिसमें से सदस्य बाहरी बल का प्रतिरोध करने और आंतरिक आदेश के संरक्षण के उद्देश्य से एकजुट होते हैं।" हम इस परिभाषा से अनुमान लगा सकते हैं कि यह केवल झूठ बोल रहा है राज्य की पुलिस कार्य पर जोर देते हुए हालांकि आधुनिक युग में कोई भी राज्य ऐसे सीमित कार्यों के साथ नहीं रहता है। यह एक सामाजिक कल्याणकारी राज्य बन जाता है और कोई भी राज्य कल्याणकारी राज्य नहीं बन सकता है जब तक कि यह अपने विषयों के आर्थिक हितों की रक्षा न करे। यहां तक कि भारतीय निर्वाचन क्षेत्र आर्थिक न्याय के माध्यम से सामाजिक कल्याणकारी राज्य बना रहा है। भारतीय निर्वाचन क्षेत्र के प्रस्ताव में यह शब्द शामिल है जिसमें कहा गया है कि राज्य अपने सभी विषयों को सामाजिकए आर्थिक और राजनीतिक न्याय के लिए सुरक्षित करने का दायित्व हैए हालांकि इन शब्दों का केवल शिलालेख लोगों के हितों के लिए पर्याप्त नहीं होगा। यह शोध पत्र मुख्य रूप से आर्थिक न्याय से संबंधित प्रावधानों पर केंद्रित है और भारतीय राष्ट्रों द्वारा अपने विषयों को आर्थिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए सुनिश्चित विभिन्न अधिकारों की व्याख्या करना चाहता है। भारत का संविधान भारत के लोगों के लिए विभिन्न मौलिक अधिकार प्रदान करता है और राज्य नीति के निर्देश सिद्धांत के तहत राज्य के हिस्से पर कुछ कर्तव्य भी निर्धारित करता है जिसके माध्यम से यह अपने लोगों के लिए आर्थिक न्याय सुनिश्चित करता है।

इस शोध पत्र में सामाजिक और आर्थिक न्याय की विवेचना की गयी है ।

सामाजिक और आर्थिक न्याय

सामाजिक और आर्थिक न्याय शोध पत्र रूढ़िवादीए उदार और कट्टरपंथी सहित सामाजिक और आर्थिक न्याय के विभिन्न दृष्टिकोणों की जांच करते हैं।

सामाजिक और आर्थिक न्याय का अध्ययन रूढ़िवादीए उदार और कट्टरपंथी सहित विभिन्न दृष्टिकोणों को प्रकट करता है। सैद्धांतिक रूप सेए सभी लक्ष्यों को समान लक्ष्यों को प्राप्त करने की आशा हैए लेकिन अलग-अलग पथों के माध्यम से। सामाजिक और आर्थिक न्याय विधि के बावजूदए सर्वोत्तम प्राप्त करने योग्य

"सामाजिक अच्छा" निर्धारित करना आसान नहीं है। अपनी पुस्तक "ए थ्योरी ऑफ जस्टिस" मेंए जॉन रॉल्स ने व्यक्तियोंए समाज और उनकी सरकार के बीच सामाजिक अनुबंध में एक एकीकृत विषय के रूप में न्याय का प्रस्ताव दिया। व्यक्तिगत मतभेदों के विस्तृत स्पेक्ट्रम को ध्यान में रखते हुएए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि एक आम लक्ष्य के कई दृष्टिकोण हैं।

सामाजिक और आर्थिक न्याय एक अवधारणा है जो हर किसी को प्रभावित करती हैए लेकिन ऐसा कुछ नहीं है जिसके साथ अधिकांश लोग घनिष्ठ परिचित हैं। शिक्षाविदों और राजनेताओं ने न्याय के अध्ययन में काफी समय दिया है। शायद सामाजिक और आर्थिक न्याय की उपलब्धि नागरिकों की अधिक सक्रिय भागीदारी की आवश्यकता है। फिर भी परिभाषा के अनुसार नागरिकता भी एक राजनीतिक अवधारणा हैए जो राजनीतिक ढांचे में व्यक्तियों के एकीकरण और कानून के संस्थानों में उनकी भागीदारी से संबंधित है। प्रकृति सेए इसमें नागरिक मामलों के प्रबंधन में नागरिक शामिल होते हैं। नागरिकों को कार्रवाई करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिएए हमारे समाज के पिछले विकास को समझना महत्वपूर्ण है।

संरक्षक न्याय की खोज में सख्ती से नैतिक और नैतिक संहिता बनाए रखते हैंए जो हमारे देश की धार्मिक स्वतंत्रता की नींव पर भारी बैंकिंग करते हैं। हालांकिए यह वही स्वतंत्रता है जिसने अधिक उदार धार्मिक और राजनीतिक संगठनों को जन्म दिया है। हालांकिए उदारता नई नहीं है। स्कॉटिश अर्थशास्त्री की राजनीतिक अर्थव्यवस्था समाज की उदार दृष्टि पर आधारित थीए जैसा कि अन्य थे। राज्य से निजी संपत्ति और स्वायत्तता विदेशी नहीं हैए या तो। एक समाज मेंए स्वायत्तता महत्वपूर्ण है ।

सामाजिक न्याय

एक विचार के रूप में **सामाजिक न्याय** की बुनियाद सभी मनुष्यों को समान मानने के आग्रह पर आधारित है। इसके मुताबिक किसी के साथ सामाजिकए धार्मिक और सांस्कृतिक पूर्वग्रहों के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। हर किसी के पास इतने न्यूनतम संसाधन होने चाहिए कि वे ष्उत्तम जीवनष की अपनी संकल्पना को धरती पर उतार पाएँ। विकसित हों या विकासशीलए दोनों ही तरह के देशों में राजनीतिक सिद्धांत के दायरे में सामाजिक न्याय की इस अवधारणा और उससे जुड़ी अभिव्यक्तियों का प्रमुखता से प्रयोग किया जाता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि उसका अर्थ हमेशा सुस्पष्ट ही होता है। सिद्धांतकारों ने इस प्रत्यय का अपने-अपने तरीके से इस्तेमाल किया है। व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में भीए भारत जैसे देश में सामाजिक न्याय का नारा वंचित समूहों की राजनीतिक गोलबंदी का एक प्रमुख आधार रहा है। उदारतावादी मानकीय राजनीतिक सिद्धांत में उदारतावादी-समतावाद से आगे बढ़ते हुए

सामाजिक न्याय के सिद्धांतीकरण में कई आयाम जुड़ते गये हैं। मसलनए अल्पसंख्यक अधिकारए बहुसंस्कृतिवादए मूल निवासियों के अधिकार आदि। इसी तरहए नारीवाद के दायरे में स्त्रियों के अधिकारों को ले कर भी विभिन्न स्तरों पर सिद्धांतीकरण हुआ है और स्त्री-सशक्तीकरण के मुद्दों को उनके सामाजिक न्याय से जोड़ कर देखा जाने लगा है।

यहाँ उल्लेखनीय है कि साठ के दशक से ही पश्चिम में नारीवादी आंदोलनए नागरिक अधिकार आंदोलनए गेए लेस्बियन और ट्रांस-जेंडर आंदोलन और पर्यावरण आंदोलन आदि उभरने लगे थे। बाद के दशकों में इनका प्रसार ज़्यादा बढ़ा और इन्होंने सैद्धांतिक विमर्श को भी गहराई प्रदान की। मसलनए नारीवादियों ने उदारतावाद और रॉल्सवादी रूपरेखा की आलोचना की। अपने विश्लेषण द्वारा उन्होंने पितृसत्ता को नारीवादियों के समान हक के रास्ते में सबसे बड़ी रुकावट के रूप में रेखांकित किया। इसी तरहए गेए लेस्बियन और ट्रांस- जेंडर लोगों ने समाज में ष्सामान्यष या ष्नार्मलष की वर्चस्वी रूपरेखा पर सवाल उठाया और अपने लिए समान स्थिति की माँग की। नागरिक अधिकार आंदोलनों द्वारा पश्चिम मेंए ख़ास तौर पर अमेरिकी समाज में काले लोगों ने अपने लिए बराबरी की माँग की। मूल निवासियों ने भी अपने सांस्कृतिक अधिकारों की माँग करते हुए बहुत सारे आंदोलन किये हैं। बहुसंस्कृतिवादियों ने अपनी सैद्धांतिक रूपरेखा में इन सभी पहलुओं को समेटने की कोशिश की है। इन सभी पहलुओं ने सामाजिक न्याय के अर्थ में कई नये आयाम जोड़े हैं। इससे स्पष्ट होता है कि विविध समूहों के लिए सामाजिक न्याय का अलग-अलग अर्थ रहा है।

असल में विकासशील समाजों में पश्चिमी समाजों की तुलना में सामाजिक न्याय ज़्यादा रैडिकल रूप में सामने आया है। मसलनए दक्षिण अफ़्रीका में अश्वेत लोगों ने रंगभेद के ख़िलाफ़ और सत्ता में अपनी हिस्सेदारी के लिए ज़ोरदार संघर्ष किया। इस संघर्ष की प्रकृति अमेरिका में काले लोगों द्वारा चलाये गये संघर्ष से इस अर्थ में अलग थी कि दक्षिण अफ़्रीका में काले लोगों को ज़्यादा दमनकारी स्थिति का सामना करना पड़ रहा था। इस संदर्भ में भारत का उदाहरण भी उल्लेखनीय है। बहुसंस्कृतिवाद ने जिन सामुदायिक अधिकारों पर जोर दिया उनमें से कई अधिकार भारतीय संविधान में पहले से ही दर्ज हैं। लेकिन यहाँ सामाजिक न्याय वास्तविक राजनीति में संघर्ष का नारा बन कर उभरा। मसलनए भीमराव आम्बेडकर और उत्पीड़ित जातियों और समुदायों के कई नेता समाज के हाशिये पर पड़ी जातियों कोशिक्षित और संगठित होकर संघर्ष करते हुए अपने न्यायपूर्ण हक को हासिल करने की विरासत रच चुके थे। इसी तरह पचास और साठ के दशक में राममनोहर लोहिया ने इस बात पर जोर दिया कि पिछड़ोंए दलितोंए अल्पसंख्यकों और स्त्रियों को एकजुट होकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष करना चाहिए। लोहिया चाहते थे कि ये समूह

एकजुट होकर सत्ता और नौकरियों में ऊँची जातियों के वर्चस्व को चुनौती दें। इस पृष्ठभूमि के साथ नब्बे के दशक के बाद सामाजिक न्याय भारतीय राजनीति का एक प्रमुख नारा बनता चला गया। इसके कारण अभी तक सत्ता से दूर रहे समूहों को सत्ता की राजनीति के केंद्र में आने का मौका मिला। ग़ौरतलब है कि भारत में भी पर्यावरण के आंदोलन चल रहे हैं। लेकिन ये लड़ाइयाँ स्थानीय समुदायों के अपने ष्जलए जंगल और जमीनष् के संघर्ष से जुड़ी हुई हैं। इसी तरह विकासशील समाजों में अल्पसंख्यक समूह भी अपने ख़िलाफ़ पूर्वग्रहों से लड़ते हुए अपने लिए ज़्यादा बेहतर सुविधाओं की माँग कर रहे हैं। इस अर्थ में सामाजिक न्याय का संघर्ष लोगों के अस्तित्व और अस्मिता से जुड़ा हुआ संघर्ष है।

आर्थिक न्यायश की परिभाषा

आर्थिक न्याय सामाजिक न्याय का एक घटक है। यह आर्थिक संस्थानों के निर्माण के लिए नैतिक सिद्धांतों का एक सेट है जिनमें से अंतिम लक्ष्य प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक पर्याप्त सामग्री नींव बनाने का अवसर पैदा करना है जिस पर अर्थशास्त्री से परे एक प्रतिष्ठितए उत्पादक और रचनात्मक जीवन है।

आर्थिक न्याय दो शब्दों से मिलकर बना है जिसका मतलब है अर्थ संबंधी न्याय प्रकृति में पाए जाने वाले सारे संसाधन ही मूल रुप स अर्थे (धन) है इनके उपभोग से ही हमारा जीवन चलता है और इनके बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है

हर व्यक्ति अपने अधिक से अधिक सुख चाहता है और दुख से पूरी तरह बचना चाहता है इसलिए हर व्यक्ति चाहता है कि उपभोग के ये सारे संसाधन उसे हमेशा कम-से-कम परिश्रम में प्रचुर मात्रा में मिलते रहें और उसे कभी भी इनके अभाव का दुख न उठाना पड़े।

लेकिन ये प्राकृतिक संसाधन प्रकृति में हमेशा सीमित मात्रा में ही उपलब्ध रहते हैं और निरंतर प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होते और नष्ट भी होते रहते हैं एवं उनको कृत्रिम रूप से नष्ट और उत्पन्न भी किया जा सकता है।

वास्तव में प्रकृति के सारे पदार्थों में परस्पर संघठित और विघटित होने की क्रियाएं निरंतर चलती रहती है जिससे पुराने पदार्थों से ही अनेक प्रकार के नए पदार्थ उत्पन्न हो जाते हैं वास्तव में यह पदार्थों का रुपांतरण मात्र है मूल पदार्थों में तो न कुछ घटता है और न हीं कुछ बढ़ता है।

मनुष्य इन पदार्थों का उपयोग कुछ खास रूपों में ही कर सकता है इसलिए वह अपनी आवश्यकताओं के अनुसार इन्हें उन रूपों में बदलने के लिए परिश्रम करता है और उसने इस प्रकार के रूपांतरण के लिए आवश्यक अपनी बुद्धि और ज्ञान का खूब विकास किया है और आगे भी करता जा रहा है।

लेकिन प्राकृतिक संसाधनों के बिना तो वह इनका रुपांतरण भी नहीं कर सकता और उपभोग भी नहीं कर सकता ये प्रकृति में सदा सीमित मात्रा में ही उपलब्ध रहते हैं इसलिए हर व्यक्ति इनकी अधिक से अधिक मात्रा का संग्रह कर उन पर अपना अधिकार जमा लेना चाहता है ताकि कोई दूसरा व्यक्ति उनका उपयोग न कर सके और वह जब चाहे इनका उपयोग करें।

मनुष्य की यह प्रवृत्ति ही मूल रूप सॉ सब लोगों के बीच विवाद और युद्ध का कारण बनती है हर व्यक्ति द्वारा इनकी असीमित मात्रा पर अपना व्यक्तिगत अधिकार स्थापित करने के प्रयासों के कारण इनका कृत्रिम अभाव उत्पन्न हो जाता है जिससे अन्य लोगों के लिए इन पदार्थों की उपलब्धता में कमी आ जाती है और इससे उन्हें इनके अभाव या कठोर परिश्रम करने के दुख को झेलना पड़ता है जिससे हर आदमी बचना चाहता है।

इस प्रकार एक व्यक्ति द्वारा अपने सुख को बढ़ाने के लिए जो प्रयास किए जाते हैं उनसे दूसरे लोगों के सुख में कमी आ जाती है और उनमें परस्पर टकराव की स्थिति पैदा होती है जो उनमें अनेक प्रकार के विवाद मतभेद षड्यंत्र युद्ध और विनाश का कारण बनती है जो सबके लिए अत्यंत दुखदाई होता है।

इसलिए हर व्यक्ति इन दुखदाई स्थितियों से बचना चाहता है और शांतिपूर्वक इस विवाद को समाप्त करने के अतिरिक्त उसके पास कोई चारा नहीं होता और तब सब लोगों को न्याय की आवश्यकता पड़ती है।

इस प्रकार न्याय एक गंभीर युक्ति या उपाय है जो मनुष्य की विवेकशीलता विवशता और दूरदृष्टि का परिणाम है यह समानता और स्वतंत्रता का अत्यंत सुक्ष्म समन्वय है। जिसका एकमात्र उद्देश्य लोगों के बीच अपने अपने स्वार्थों को लेकर होनेवाले टकराव को शांतिपूर्वक समाप्त करना है।

न्याय के दो अंग होते हैं समानता और स्वतंत्रता। किंतु मैं तो अकेले समानता न्याय होता है और ना ही अकेले स्वतंत्रता न्याय की आवश्यकता वहीं पड़ती है जहां अधिकारों को लेकर किसी भी प्रकार का विवाद होता है सारा विवाद प्राकृतिक संसाधनो पर स्वामित्व को लेकर ही है और इसे न्याय पूर्वक समाप्त करने के लिए समानता और स्वतंत्रता दोनों का ही सहारा लेना आवश्यक है

समानता का मतलब यह है कि प्रकृति में पाए जाने वाले सारे संसाधनों पर सब का समान अधिकार है और हर व्यक्ति अपने उपभोग की जरूरतों को पूरा करने के लिए स्वतंत्रता पूर्वक इनका उपयोग कर सकता है।लेकिन स्वतंत्रता का मतलब यह भी है कि हर व्यक्ति अपनी जरुरतों के अनुसार इन को प्राप्त करने के लिए मेहनत करें या ना करें इसका पूरा अधिकार है कोई दूसरा व्यक्ति उसे ऐसा करने या नहीं करने के लिए मजबूर न कर सकता।

लेकिन गंभीर विवाद तो तब उत्पन्न होता है जब कोई व्यक्ति भविष्य के लिए इन संसाधनों का अपनी आवश्यकताओं की बजाय अपनी क्षमता के अनुसार अधिक मात्रा में संग्रह करने लगता हैं जिन लोगों की क्षमताएं अधिक होती हैं उससे दूसरे लोगों के सामने अभाव के संकट की स्थिति बन जाती है और एक व्यक्ति के लिए संपत्ति संग्रह की अधिकतम सीमा का सवाल उत्पन्न होता है।

अर्थात प्राकृतिक संसाधनों पर स्वामित्व के सवाल को शांतिपूर्वक और अधिकतम सहमति के द्वारा समाधान करने का मतलब ही आर्थिक न्याय है ताकि सब लोग एक दूसरे के साथ शांतिपूर्वक परस्पर विश्वास सद्भाव सहयोग और आत्मीयता के साथ अपना जीवन चला सके एवं कोई भी व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति की सुरक्षा के लिए खतरा नहीं बने।

इस प्रकार आर्थिक न्याय संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण भाग है जिसे हम सामाजिक व्यवस्था की धुरी भी कह सकते हैं। संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की सफलता या असफलता मुख्य रूप से इसी पर निर्भर करती है। स्पष्ट है कि आर्थिक न्याय के बिना समाज में शांति की स्थापना की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती।

इस प्रकार के न्यायपूर्ण वितरण से हर व्यक्ति को उसके उपभोग के संसाधन न्याय पूर्ण मात्रा में सहज रुप से प्राप्त होते रहेंगे और लोगों के बीच संसाधनों पर स्वामित्व के विवाद को शांति पूर्वक समाप्त करने में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होगी। यही आर्थिक न्याय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

1ण गाबा ओमप्रकाश : समकालीन राजनीती सिद्धांत , पृष्ठ – 231

2ण सिंह , डॉ महेंदर : सामाजिक – आर्थिक न्याय की रुपरेखा

3ण सिंह , वीरेंदर : सामाजिक न्याय

4ण नारायण इकबाल : राजनीती शाश्त्र के मूल सिद्धांत